मनुष्य बनो

शरणागति, शुभ संकल्प,

क्षमा, प्रेम,

निष्काम कर्म, ब्रह्मचर्य

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टि-कोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है। मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायगा।

४—किसी धर्म, पंथ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक क होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जाँय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ साफ अवश लिखना चाहिये। उत्तर के लिये जबावी कार्ड आना चाहिये वी० पी पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायगी। इसका वार्षिक मूल्य ६—०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुँचे तो पहले अपने य डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर मिले व अगला अ निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्र बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेज के नाम से भेजने चाहिये। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ स लिखना चाहिये। और पते की तबदीली भी।

ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

❀ मनुष्य बनो ❀

वर्ष २८ | ज्येष्ठ सं० २०३५ वि० जून, १९७८ | संख्या ९

सच्ची शान्ती

शान्ती सच्ची सदा, गुरुनाम के सुमिरन में है।
आप जानोगे कि दुख सुख, खेल सारा मन में है ॥ १ ॥
अपने आप में रहो, चित की रहे नित रोक थाम।
शान्ती उसको कहाँ, दिन रात जो अनवन में है ॥ २ ॥
वस्तु है घर में तुम्हारे, खोज घर ही में करो।
शान्ती की वस्तु घट के, अपने ही बरतन में है ॥ ३ ॥
वृत्तियों को चित्त की, अन्तर में करोगे जो निरोध।
यह समझलोगे कि, सिद्धि शक्ति सब साधन में है ॥ ४ ॥
राधास्वामी राधास्वामी, राधास्वामी नाम लो।
नाम का विस्राम प्यारे, शब्द के श्रवण में है ॥ ५ ॥

भूतपूर्व संपादक तथा संस्थापक "मनुष्य बनो"

पूज्य बाबूजी दि० २८-६-९६ को परमधाम चले गये मगर अपने पीछे एक अमूल निधि छोड़ गये जिसके माध्यम से हम सतसंगियों, प्रेमीजनों तथा इष्ट मित्रों की सेवा करते रहेंगे अपने जीवन के ७६ वर्षों में उन्होंने लगभग ४५ वर्ष राधास्वामी मत का प्रचार किया। जो कुछ उन्होंने स्वयं अनुभव किया उसी का प्रचार जन जन तक पहुँचाते रहे। सर्व प्रथम उन्होंने 'सुमेरु-पर्वत" तथा "महारामायण" प्रकाशित किये थे जिसके कारण उनको दाता-दयाल ने "पंडित" की उपाधी से विभूषित किया था। १९४८ से परम-दयालजी महाराज के समर्थन में आये और महाराज के जीवन तथा सिद्धान्तों से इतने प्रभावित हुए कि अपना जीवन ही उनको अर्पण कर दिया। महा-राज को इस बुग का सर्वश्रेष्ठ सन्त अवतार मानते थे और अन्तिम समय तक अस्पताल में भी महाराज के फ़ोटो पर नजर लगाये हुए थे। अचेतन अवस्था में जाते जाते भी महाराज का स्मरण उनकी जबान पर बना रहा और अन्त में परम शक्ति में विलीन होगये। उन्होंने अपने जीवन में जो भी सामिग्री हमारे परम धरोहर के रूप में छोड़ी है उससे हम पाठकों को यथा-नुसार लाभान्ति करते रहेंगे।

हम तो अभी इस सन्तमत की तालीम की निम्न श्रेणी में स्थित हैं। न कोई ज्ञान है न अभ्यास और न कोई अन्य साधम। परमदयालजी महा-राज की आज्ञा थी कि ऐ! प्रभूदयाल देवीचरन के चले जाने के पश्चात सन्त मत की शिक्षा यही समाप्त नहीं हो जाय। इस काम को अधिक से अधिक जन जन तक पहुंचाना है इसके साथ ही श्री आनन्दराव जी हैदराबाद ने मुझको यह रोशनी दिखाई कि प्रभूदयाल तुम्हारे परिवार पर महर्षिजी तथा परमदयालजी की असीम कृपा है। उनका अमूल्य इतिहास तुम्हारे पिताजी के साथ ही कहीं समाप्त न होजाय। तुम लगन से, सच्ची निष्टा से काम करते रहना। मालिक तुम्हारा कल्याण करेंगे। बस यही आदेश जिसने मुझको आपके लिये समर्पित कर दिया है। यह काम किये जारहा हूँ। आशा है कि हम पाठकों को अधिक से अधिक मात्रा में अमृतपान कराने में समर्थ होंगे इसके लिये आशींवाद आप लोगों से चाहिये।

भवदीय

प्रभूदयाल मीतल

FAQIR LIBRARY CHARITABLE TRUST (Regd.)
INCOME AND EXPENDITURE ACCOUNT

Year Ended 31—3—1977			
	To **Mandir expenses**		
26954 37	Salary & Bonus.	25203 24	
33332 93	Printing & Stationery	51373 38	
3320 75	Postage, telegrams & telephone.	8508 15	
750 00	Audit fee.	800 00	
310 00	Legal charges.	310 00	
213 35	Travelling & Conveyanee allowance.	111 65	
927 00	Free help to deserving students.	934 00	
7635 79	Frce aid to Blind&Orphans	11619 64	
17171 53	Langer.	12469 72	
316 95	Newspaper & Periodicals	254 00	
80 00	Spreading and propogating the teaching of Rishis and Saints.	-nil-	
3362 67	Building repair & Maintenance.	3199 97	
1365 06	General repair charges	4119 88	
3757 60	Electric charges.	7856 42	
-1933 28	Misscellaneous charges.	964 00	
25 50	Bank commission charges.	6 50	
5968 32	Satsang.	10733 58	
850 63	Gardening & water charges	1504 68	
291 32	Sanitation charges	621 17	
	Dispensary Charges		
2484 23	Medicines 3046 86		
52252 93	Free eye hospital 39905 69 medicines		
774 92	Miscellaneous charges -nil-		
50 94	Free eye hospital Mis -nil- cellaneous charges	42952 59	
	Depreciation written off.		
2252 40	Furniture 2199.97		
859 89	Library 855.40		
9355 00	Building 9995 98		
575 20	Library equipment 518.00		
4460 00	Eye hospital Bldg. 4255 45		
832 88	Sanitary fitting. 1046.35		

312 93	Electric equipment.	281.00		
1288 13	Medicai equipment	1111.36		
-nil-	Tubewell	626.45		
-nil-	Tape Record	235 00	21124 96	204667 49
22526 39	Balance (Excess of Income over Expenditure)			17637 31
Rs.206595 89	Total..............		........Rs.	222304 80

INTERNAL AUDITOR SECRETARY PRESIDENT

As per our report at the foot of the balance sheet

for (D. Sharma & Co.)

(Partner)

Chartered Accountants : Auditors.

MANAVTA MANDIR HOSHIARPUR.
FOR THE YEAR ENDED 31st MARCH, 1978.

Year Ended 31—3—1977			
187951 30	By Donations received	182747 10	
260 00	Subscription received	290 00	
3000 00	Rent received	4550 00	
8635 70	Interest received	11015 .33	
1450 .45	Manavata Dispensary receipts	1206 .60	
5298 44	Free E&A Hospital receipts	12495 77	
-nil-	Government grant for free E&A Hospital receipts	10000 00	222304 80
Rs.206595 89	Total................	........Rs.	222304 80

Vice President Trusters

सत्संग

हजूर परमदयाल पं० फकीरचन्द जी महाराज मानवता मन्दिर होशियारपुर

दिनांक २४-८-६९

अब चलो सजनी दूसर धाम ।
निरखो त्रिकुटी गुरु का ठाम ॥
ओंकार धुन जहाँ विश्राम ।
गरजे बादल और घनश्याम ॥
सूरज मण्डल लाल मुकाम ।
गुरू ने बताया गुरू का नाम ॥
पंचम वेद नाद यहि गाया ।
चन्द्र बल कंवल संत बतलाया ॥
घंटा शंख तजी धुनि होई ।
गरज मृदंग सुनाई ओई ॥
सुरत चली और खोला द्वार ।
वंकनाल धँस हो गई पार ॥
ऊँची नीची घाटी उतरी ।
तिल की उलटी फेरीं पुतरी ॥
गढ़ भीतर जाय कीन्हा राज ।
भकंती भाव का पाया आज ॥
करम वीज सब दिया जलाई ।
आगे को फिर सुरत वढ़ाई ॥
नौबत झड़ती आठों याम ।
सूरत पाया मूल कलाम ॥
महाकाल और कुरम बखाना ।
उत्पत्ति बीज यहां से जाना ॥

।। मनुष्य बनो ।।

सूरज चांद अनेकन देखो ।
तारा मण्डल बहु बिधि पेखो ।।
पिन्ड अन्ड से न्यारी खेली ।
ब्रह्मण्ड पार चली अलबेली ।।
बन और परवत बाग दिखाई ।
चमन चमन फुलबारी छाई ।।
नहरें नदियाँ निर्मल धारा ।
समुद्र पुल चढ़ हो गई पारा ।।
मेर सुमेर देख कैलासा ।
गई सुरत जहाँ विमल विलासा ।।
राधास्वामी कहत पुकारी ।
दूसर मंजल करली पारी ।।

राधास्वामी ! आप लोगों ने यह शब्द सुना । मैंने प्रण किया था कि इस मार्ग पर सच्चा होकर चलूँगा जो कुछ मेरा अनुभव होगा संसार को बता जाऊँगा । मैं किसी प्रकार का दाबा नहीं करता कि जो कुछ मेरा अनुभव है वही ठीक है मगर संतों से क्षमा चाहता हूं कि मैं नाककटों में शामिल होकर हां में हाँ मिलाने के लिए तैयार नहीं हूं । जो कुछ मैंने अनुभव किया है उसे कहने का मुझे अधिकार है ।

पहला प्रश्न मैं अपनी आत्मा से करता हूँ कि क्या तूने त्रिकुटी मंजल पार कर ली ? कई वर्ष बीते जब मैं बसरेबगदाद में था उसी समय पार की थी, लाल सूर्य देखा था । दातादयाल जी महाराज का सुन्दर रूप देखा था और मृदंग सुना था । क्या उसके सुनने के बाद फिर मुझे शान्ति मिल गई ? फिर तुम्हारे मन ने हेराफेरी नहीं की ? मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊँगा । मैं निर्भय होकर कहता हूँ कि जब तक मानव को सत्संग करके अपने मन के विकारों को दूर करने की इच्छा नहीं है वह त्रिकुटी में अभ्यास करने के बाद भी गिरता रहेगा और उसे शान्ति नहीं मिलेगी ।

ऐ धार्मिक और पांथिक संसार के महात्माओ, गुरुओ और सत्संगियो !

मैं यह नही कहता कि तुम मेरी बात को सत्य मानो। तुम अपनी रहनी को देखो। तुम संसार को सुख शब्द योग का उपदेश करते हो, पहले तुम अपने जीवन के अनुभव को देखो फिर किसी को उपदेश करो। तुम में कई अभ्यासी होंगे। कई आदमियों ने अपने अन्तर लाल रंग में गुरू का रूप देखा होगा। क्या उसके बाद तुम्हारे मन में बुराई नहीं आई ? लालच नहीं किया, किसी को धोखा नहीं दिया, किसी के साथ चार सौ बीस नहीं की ? किताबों की लिखी हुई बातों को मत कहो। सबसे बड़ा धोखा इन गुरुओं ने यह दिया जब ये कहते हैं कि हम स्वपने में, समाधी में किसी के अन्तर जाते हैं। अगर ये महापुरुष दाता करें कि हमने त्रिकुटी में जाकर कुछ प्राप्त कर लिया तो बतायें। इसलिए मैं कहता हूं कि सबसे पहले अपने मन के विचारों भावगुणों और विकारों को दूर करो। जब तक आप ऐसा नहीं करोगे तो तुम्हें अभ्यास करने से अहंकार आ जायेगा। आपको शान्ति नहीं मिलेगी इसलिए जिन आदमियों को सत्संग करके अपने आपको ठीक करने की इच्छा है सत्संग केवल उन आदमियों के लिए है दूसरों के लिए नहीं। मैंने जो बात कही है अमली तौर पर गलत कहीं है ? नही। यह ठीक कही है। पहली स्टेज गुजर जाने के बाद दूसरी धाम आ जाती है। पहली स्टेज में तो केवल शारीरिक जीवन, स्थूल शरीर का स्त्रोत जहाँ से प्रकृति बनती है वो है पहली स्टेज। इस मार्ग पर वही चलेगा जिसको इस संसार में दुख महसूस होगा। एक तो शारीरिक कर्मेन्द्रियों के देखे हैं फिर इससे आगे ज्ञान इन्द्रियाँ हैं। ज्ञान इन्द्रियों के क्या दुख हैं ? मन की अशान्ति। कर्मइन्द्रियों के दुख के बारे में मैंने कल बता दिया था। इस अशान्ति को दूर करने के लिए त्रिकुटी का स्थान है। अशान्ति कब दूर होगी। जब आदमी की सुरत कोई इष्ट धारण करे जिसको वह समझे कि वह पूर्ण है। तो जब तक किसी को उस मालिक का सगुण रूप सामने नहीं आयेगा वह त्रिकुटि की मंजल को पार नहीं कर सकता जब तक कोई साकार रूप को अपने अन्तर या बाहर नहीं बनायेगा, उसे पूर्ण विश्वास नहीं होगा उसको त्रिकुटी नहीं लग सकती। यह मेरा अनुभव है। त्रिकुटी में जाने के लिए अगर किसी ने उस मालिक को राम का

रूप माना हुआ है तब भी उसकी त्रिकुटी लग सकती है अगर किसी ने कृष्ण का रूप या किसी और इष्ट को पूर्ण माना हुआ है और उसका उस पर विश्वास और श्रद्धा है तो भी त्रिकुटी लग सकती है । त्रिकुटी लगने से क्या होता है ? मन के विचार ज्ञान इन्द्रियें मन चित बुद्धि अहंकार जिनके नियंत्रण में न होने के कारण हमें अशान्ति रहती है, हमें शान्ति मिल सकती है । इसलिए इस स्टेज पर अभ्यास करने के लिए जिस रूप को तुम मानते हो उसको पूर्ण मानो जब तक तुम्हारा उस पर विश्वाश नहीं है तुम लाख यत्न करो तुम्हारी त्रिकुटी नहीं लग सकती । यह मेरा अपना जीवन का अनुभव है । जब रूप बन जाता है तो फिर क्या होता है ।

अब चलो सजनी दूसर धाम ।
निरखो त्रिकुटी गुरु का ठाम ।।

वह गुरु की जगह कैसे हैं ? जिसको तुमने मान लिया है वही गुरू हैं । जो तुमने माना है वह तुम्हारे अपने ही मन का माना हुआ रूप है । जिन आदमियों को यह ज्ञान हो जाता है कि गुरु का रूप उनके अपने मन का बनाया हुआ है उनको त्रिकुटी में साधन करने की कोई आवश्यकता नहीं । इस वास्ते जीवों को साधन सम्पन्न बनाने के लिए जिस परदे को मैंने खोला है उसको खोलने का दस्तूर नहीं था । मगर मैं सन्तमत का पैरोकार हूं, मेरी मंजल है चौथा पद । इसलिए मैं कहता हूं कि मानव को यह समझ आजाये तो वह अपने अन्तर एक रूप मान ले और त्रिकुटी में चला जाये । अगर कोई यह कहे कि रूप अन्तर में आयेगा तब वह त्रिकुटी में जायेगा यह गलत है हरएक आदमी अपने विश्वास प्रेम से ध्यान करता हुआ त्रिकुटी की मंजल में जा सकता है । मैं आपको सच्ची बात बताता हूं किसी को अपने जाल में फँसाने का यत्न नहीं करता बल्कि तुमको गुरुमत का सार जो मैंने समझा है वह बताता हूं सम्भव है कि मैं गलत हूँ, यह कहना कि जो कुछ मैं कहता हूँ यही ठीक है यह गलत है । जिस समय अन्तर में रूप बन जाता है तो फिर क्या होता है ?

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

ओंकार धुन यहाँ विश्राम ।
गरजे बादल और घनश्याम ॥

वहाँ सूक्ष्म करता, मन, चित्त, बुद्ध और अहंकार के खेल है। तुम्हारे मन के विचारों के खेल हैं जिस प्रकार आकाश सूर्य अनेक समुद्रों का पानी खींचकर आकाश के ऊपर ले जाता है वहां जब वे आपस में रगड़ खाते हैं तो बादल की गरज होती है इसी प्रकार जब हमारा मन, चित्त बुद्धि अहंकार पहले तो वे अपनी २ अलग अलग किरणों से हमारे मन का खेल करते हैं फिर इकट्ठे होने पर उनमें रगड़ पैदा होती है उसमें से रोशनी पैदा होती है और एक बादल की गरज होती है। बादल की गरज को ओ३म कहते हैं कोई कह देता है बम-बम, कोई कह देता है मृदंग और कोई कह देता है बादल की गरज। कई उसका और नाम रख लेते हैं। है के वो आवाज ओह वो आबाज तुम्हारे मन चित्त, बुद्धि, अहंकार के बिचारों के इकट्ठा होने से जो वहां वे आपस में रगड़ खाते हैं वहाँ वह आबाज पैदा होती है—

ओंकार धुन यहाँ विश्राम ।
गरजे बादल और घनश्याम ॥

वहाँ विश्राम मिलता है। मन जो नाना प्रकार के विचार उठाता था जिसके कारण हम अशान्त थे इस स्थान पर इकट्ठा होने से विश्राम मिलता है और इस स्थान से ही ये मन चित्त, बुद्धि, अहकार काम करते हैं। क्योंकि ये उस स्थान से काम करते हैं और मन चित्त बुद्धि अहंकार से ही हमारा जीवन बनता है इसलिए इस स्थान को ओ३म का मुकाम कहते हैं हिन्दू शास्त्रों में इसकी बड़ी भारी महिमा है। ओ३म के ऊपर विन्दु होता है। विन्दु का मुकाम स्थान आगे होता है मगर जब ये भी इकट्ठे हो जाते हैं उस स्थान को चौका कहते हैं। यह ओ३म बाहर नहीं हैं तुम्हारे अन्तर है। अब कोई उसे ओ ओ ओ ओम कह देता है कोई उसे मृदग कहता है। यह यह शब्दों का जाल हैं। असली चीज हमारे मन की बृत्तियों को इकट्ठा हो जाने की अवस्था का नाम ओम है उसमें बादल की गरज है—

सूरज मंडल लाल मुकाम।
गुरु ने बताया गुरु का नाम॥

बाहर के गुरु ने हमें उस गुरु का स्थान बता दिया वह गुरु कौन है ? ऐ मानव तू भ्रम में आया हुआ है वह तेरे मन का मुकाम है। तेरा मन ही गुरू है। मैं यह स्पष्ट वर्णन क्यों कर रहा हूँ ? ससार टेकी, निबल अबल और अज्ञानी होने के कारण इस सचाई को सुनने के लिये तैयार नहीं है मगर मैं विवश हूं। क्यों ? मैंने अपने आपको समय का संत सतगुरु कहा है। जब मैं सतगुरु का काम करता हूं तो मेरा क्या कर्तव्य है। जीवों को चौथे पद की ओर ले जाना। जीव चौथे पद की ओर तभी जायेंगे जब उनको यह भेद बताऊँगा। चौथे पद की ओर कौन जायेगा। वे सारे पहली दूसरी तीसरी और चौथी स्टेज तक ही चक्कर खाते रहेंगे। चौथे पद में कैसे जायेंगे ? मैंने अपने आपको समय का संत सतगुरू कहा है पता नहीं कि मैं सन्त सतगुरू हूँ या कि नहीं मगर गुरु ऋण सिर पर था। दातादयाल जी महाराज ने आज्ञा दी थी कि निबल अबल अज्ञानी जीवों की सहायता करना और उन्हें भवसागर से पार करना। फूँक तो मैं मार नहीं सकता ना ही पाखण्ड का जाल चलाना चाहता हूँ। जो कुछ मैं कर सकता हूँ वह बता सकता हूं। तो यही बताता हूँ कि असली विश्राम पूर्ण शान्ति इन पाँच स्थानों (जिनकी व्याख्या मैं आजकल कर रहा हूँ), से आगे है। ये तो मार्ग की मंजिलें हैं। इनमें सदा ठहरने की आवश्यकता नहीं है यह तो केवल साधन करके अनुभव करने की आवश्यकता है मगर चौथा पद उसको मिलेगा जो सच्ची शान्ति चाहता है और सर्वाधार से मिलना चाहता है।

इसलिए मैं नाम नहीं देता। किसको नाम दूँ ? नाम की पहली शर्त तो यही है कि जर, जन और जमीन को भाग्य के हवाले करके आओ। मेरे पास जो भी आते हैं वे सब जर, जन, जमीन के झगड़ों में फँसे हुए है। इसके लिए मैंने कल बता दिया था कि जर, जन जमीन के झगड़ों के लिए क्या उपाय है और मन की शान्ति प्राप्त करने के लिए क्या उपाय है। अपने इष्ट को पूर्ण मानकर उसका ध्यान किया करो। तुम्हें सब कुछ

मिल जायेगा। मगर चौथा पद तभी मिलेगा जब तुम इससे आगे जाओगे। तुम्हे पुर्ण शान्ति मिल जायेगी। त्रिकुटी में अभ्यास करने वालों को क्या मिलता है ? मन की शान्ति मिलती है जिनका मन नाना प्रकार के विचारों में फँसकर दुखी होता रहता है त्रिकुटी में अभ्यास करने से शान्ति मिलती है।

दूसरे यह स्थान मन चित्त बुद्धि अहंकार के इकट्ठा करने का है इसलिए जो भी इस स्थान पर ध्यान लगायेगा उसे कठिन से कठिन बात का अनुभव हो जायेगा। ये वैज्ञानिक फिलास्फर इन्जीनियर क्या करते हैं ? ये त्रिकुटी ही तो लगाते हैं। किसी उद्देश्य को मस्तिष्क में रखकर ध्यान करते हैं और उन्हें उस उद्देश्य का ज्ञान हो जाता है फिर वे उसमें से नई नई योजनायें बनाते रहते हैं। ये जितने फिलौसफर, विज्ञानिक और डांक्टर रिसर्च करते हैं इसी स्थान पर मन को एकाग्र करने से करते हैं। इसी स्थान से संसार की खोज भी हो सकती है और इसी स्थान से अध्यात्मिक खोज हो सकती है। यह ओम का स्थान है। ओम को रचता हैं और सृष्टि से पार भी ले जायेगा ओम का अर्थ देख लो ? मैने कई किताबें देखी वे तो ओ ओ म पर ही भाषण देते हैं। बुद्धि द्वारा अनेक भावों का उपदेश करते हैं।

इस स्थान से दो लाभ हैं एक तो तुम्हारे मन को शान्ति मिलेगी दूसरे विवेक और ज्ञान पैदा हो जायेगा। जिस प्रकार की वासना लेकर ध्यान करोगे वह पूरी हो जायेगी। हमारी हिन्दू जाति बड़ी महान फिलोस्फर है, तुम देखो विद्या प्राप्त करने के लिए सरस्वती का ध्यान बताया हुआ है, धन प्राप्त करने के लिए लक्ष्मी का ध्यान बताया है, ज्ञान प्राप्त करने के लिए शिव का ध्यान बताया हुआ है और संसार में सुखी रहने के लिए विष्णु का ध्यान बताया हुआ है। जिस प्रकार की तुम्हारी इच्छा हैं उसका रूप बनाकर ध्यान करने से तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो सकती है। लक्ष्मी का ध्यान करने वाले धनवान हो सकते हैं। गुरू का ध्यान करने वाले को सब कुछ प्राप्त होता है जैसाकि हमारे मत वाले बताते हैं। धन, ज्ञान विद्या अर्थात सब कुछ देने वाला मानते हैं। सन्तों ने देखा कि जीव की बहुत आवश्यकतायें

हैं इसलिए उन्होंने गुरु ऐसा इष्ट दे दिया जिसमें ऐसा विश्वास करा दिया कि यह सब कुछ देने वाला है । यह ज्ञान, मोक्ष धन अर्थात सब कुछ देने वाला है। उन्होंने कलयुग में एक ऐसा इष्ट बना लिया जिससे मनुष्य के सारे काम जल्दी हो जाये क्योंकि इस युग में प्राणी की आयु थोड़ी होती है।

अब चलो सजनी दूसर धाम।
निरखो त्रिकुटी गुरू का ठाम ॥
ओंकार धुनि यहाँ विसराम।
गरजे बादल और घनश्याम ॥
सूरज मंडल लाल मुकाम।
गुरू ने बताया गुरू का नाम ॥

इस शब्द में लिखा हुआ है लाल सूर्य। मैंने देखा है मगर अगर यत्न करूँ कि लाल रंग का सूर्य सामने आ जाये तो नहीं आयेगा। अब क्यों नहीं आता ? क्योंकि मेरी त्रिकुटी पार हो गई है। जब तक मंजल पार नहीं होती तब तक उसे पार करने के लिए जोश रहता है। उत्साह रहता है। वह तो अमल में तुम्हारे अपने ही मन का बनाया हुआ रूप है ! जब तुम्हारे मन में जज्वा हिम्मत होगी उसमें लाली का आना प्राकृतिक बात है। हम जब किसी चीज को जोर से पकड़ते हैं तो हमारे मुँह पर लाली आ जाती है क्योंकि मन की वृत्तियें इकट्ठी होकर उस रूप को बनाती हैं इस वास्ते वहां का रग लाल हो जाता है।

अब अगर मैं इस स्थान पर आकर सतसंग कराना भी चाहूं तो भी मेरा हृदय नीचे नहीं आना चाहता ऊपर की ओर जाना चाहता है। मैंने बड़ा यत्न किया दातादयाल जी महाराज का रूप प्रकट हो गया मगर लाल रंग नहीं आया। परन्तु सफेद आया। लालरंग क्यों नहीं आया ? क्योंकि अब मुझे त्रिकुटी के स्थान की आवश्यकता नही है। जब मुझे इस स्थान की आवश्यकता नहीं है तो सुरत ऊपर जायेगी फ़िर लालरंग कैसे आयेगा। ये वे भेद हैं जो मैंने अपने जीवन में प्राप्त किये हैं। मैं किसी बात का दावा

नहीं करता हर एक आदमी को अपने जीवन का अनुभव करने का अधिकार है। स्वामी जी को अपना अनुभव कहने का अधिकार था, कबीर साहिब को अपना अनुभव कहने का अधिकार था, विज्ञानियों को अपना अनुभव कहने का अधिकार था तो मुझे भी अपना अनुभव कहने का अधिकार है। हो सकता है मैं गलती पर हूँ मगर यह दावा करना कि जो कुछ मैं कहता हूं यही ठीक है ऐसा कहने को त्यार नहीं।

सुरत चली और खोला द्वार।
बंकनाल धँस हो गई पार॥

मैंने इन बाणियों को सुनकर सारी आयु खोदी। यह बंकनाल क्या है? बंकनाल टेढ़े मार्ग को कहते हैं जब ईतृ निकालते हैं तो उसके ऊपर जो साईफन लगाते हैं उसको टेढ़ा मार्ग कहते हैं सन्तों का बंकनाल क्या है मुझे पता नहीं। हे संसार वालो! मैंने जो बंकनाल समझा है वह बताता हूँ। हमारी सुरत मन चित बुद्धि अहंकार जब इकट्ठे होते हैं वृतियां इकट्ठी होती हैं उनमें मस्ती और सरूर आ जाता है। मन की चेतना और जाग्रत अवस्था समाप्त हो जाती है। काम नही करती फिर उस अवस्था को छोड़कर एक नई अवस्था आ जाती है। उस अवस्था का नाम हैं बंकनाल, जब जाग्रत समय अंतर में अभ्यास करोगे तो तूम्हारी जाग्रत अवस्था, चेतना और शारीरिक बोधमान (Physical sencitiveness) समाप्त हो जायेंगे और एक नई चीज मन की चेतना पैदा होगी। इसका नाम है बंकनाल तुम जागते हो। रात को सोते हो अगर तुम होश में रहो तो तुम्हें पता लग जायेगा कि पहले जाग्रत अवस्था होती है फिर एक ऐसी अवस्था तुम्हारे अन्तर आ जाती है जहां तुम शरीर को भूल जाते हो और फिर स्वप्न आरम्भ हो जाता है वह जो बीच की अवस्था होती है उसका नाम बंकनाल है। कबीर साहिब ने अपने रास्तों में कई बंकनाल बताई हैं। वे बंकनाल क्या हैं। एक अवस्था को छोड़कर दूसरी चेतनता में चले जाना बंकनाल है यह मेरा अपना अनुभव है परन्तु कोई दावा नही। संसार वाणी के जाल में बुरी तरह फँसा हुआ है। वे तो Quotation मांगते हैं अमुक

ने यह कहा अमुक ने यह कहा। हिन्दुओं में अपने अन्तर के साधन को जो इस संसार में विराट पुरुष का है उसके अनुसार बनाने का यत्न किया है जब अँधेरा समाप्त होता है सूर्य चढ़ने वाला होता है उस समय संध्या का रिवाज है ताकि अंतर में जब तुम एक अवस्था को छोड़कर दूसरी अवस्था में जाओगे तो उस पर इस वातावरण का प्रभाव भी पड़ेगा। यह सहायक है जो बाहरी संसार के संस्कार हैं अभ्यास करते समय उनका प्रभाव पड़ता है। सायंकाल की संध्या का क्या भाव है ? जब दोपहर को दिन ढल जाता है सायंकाल आ जाता है उस समय संध्या की जाती है ताकि बाहर के वातावरण का प्रभाव तुम्हारे साधन में सहायक हो।

हिन्दुओं में तीन बार संध्या की जाती है प्रातः दोपहर और सायं। तीन संध्या का क्या भाव है ? जाग्रत से स्वप्न अवस्था में चले जाना, स्वप्न से आत्मिक अवस्था में चले जाना और आत्मिक अवस्था से निज अवस्था में चले जाना। असली भाव तो यह है मगर हमने प्रातः दोपहर को सायंकाल को संध्या का तरीका अपनाया हुआ है। यही सन्तमत कहता है।

तीन सुन्न से नियारा वह है देश हमारा।

हम सब लोग बाहर मुखी हैं। इस प्रकार यह भी नियम है कि जिस जगह तुम अभ्यास करते हो वह जगह निश्चित होनी चाहिए। उस जगह का वातावरण सुन्दर होना चाहिए सुगन्ध होना चाहिए, एकान्त होना चाहिए ताकि बाहर का वातावरण तुम्हारा सहायक हो। जहां अभ्यास करते हो उस जगह दूसरे आदमी के प्रतिकूल विचार नहीं होने चाहिए। इस वास्ते ये मन्दिर बनाये गये हैं जहाँ एकान्त जगह हो। वह स्थान केवल भजन पाठ के लिए ही हो। एक ही विचार के लिए नियत हो ताकि तुम्हें अन्तर साधन करने में सहायक हो, यह बंकनाल का अर्थ है।

ऊँची नीची घाटी उतरी।
तिलकी उलटी फेरी पुतरी॥

ऊँची नीची घाटी क्या है ? जब तुम मूरत (मूर्त) बनाते हो, गुरुस्वरूप का ध्यान करते हो, कभी तुम्हारा मन ऊँचे जाता है कभी नीचे, जिस

समय ऊँच नीच समाप्त होगी उस समय त्रिकुटी लगेगी। अन्तर में कोई पहाड़ नहीं है जो तुम्हें उतरना चढ़ना है। तुम्हारे मन की चेतनता, मानसिक अवस्था का उतार चढ़ाव होता रहता है। जिस समय यह उतार चढ़ाव समाप्त हो जायेगा। तुम्हारा मन ठहर जायेगा। यह ऊँची नीची घाटी का भाव है।

ऊँची नीची घाटी उतरी।
तिलकी उलटी फेरी पुतरी ।।

यहाँ पर आकर पुतली अपने आप चढ़ जाती है। कई आदमी यहां पहुँचने के लिए पुतली फेरने और चढ़ाने का यत्न करते हैं उनके सिरों में पीड़ा हो जाती है। यह जबरदस्ती का काम नहीं। तुम्हारे प्रेम के जजवे से पुतली अपने आप ऊपर चढ़ जाती है। यूँ भी जब कोई बात होती है उसपर विचार करने से तुम्हारी आँख अपने आप उलट जाती है। क्या तुम उसे आप उलटते हो ? नहीं। अपने आप ही बन्द हो जाती है और अपने आप चढ़ जाती हैं। तुमने कई बार सतसंग में दशा देखी होगी। मैं ऊँचा साधन करता हूं इसलिए मेरी पुतली अपने आप Auotomatically उलटी हुई होती है। बड़ा यत्न करने पर आंख खुलती है। तुमने ऐसा देखा होगा। कई बार क्यों ऐसा होता है ? क्योंकि यह प्रेम का मार्ग है। मेरा लड़का Russia गया था कई सालों के बाद जब वापस आया और माँ के साथ मिला तो उसकी मां की आँखों की पुतलियाँ उससे मिलते समय ऊपर को उलट गईं सत्संगी लोग अंतर में प्रेम नहीं करते लेकिन पुतली को उलटने का यत्न करते रहते हैं। उसके मस्तिष्क विगड़ जाते हैं पागल हो जाते हैं। कई प्रकार की बीमारियों में ग्रस्त हो जाते हैं। ऐसा क्यों होता है ? क्योंकि उनको कोई गुरु नहीं मिला तुम समझते हो कि किसी को बाबा फकीरचन्द मिल गया तो उसे गुरु मिल गया। दिवानो ! गुरु नाम ज्ञान भेद और समझ का है। संसार गुरू के रूप को न समझकर मेड़ चाल चलकर एक पंथ में शामिल हो गया। बाहर का गुरु तुम्हें असली मुकाम का पता देता है जैसाकि ऊपर आया है—

गुरु ने बताया गुरु का ठाम।

अगर बाहर का ही गुरू होता तो तुम्हें गुरू का मुकाम कैसे बताता ? संसार टेकी हो गया इसलिए मैं नाम देने वाला गुरू नहीं बना । मैं न ही लोगों को नाम देता हूं और न ही चेले बनाता हूँ ऐसा क्यों करता हूँ ? क्योंकि मेरा हृदय मुझे ऐसा करने की आज्ञा नहीं देता । गुरु का काम तो मैं करता हूं मगर जिस प्रकार नाम देने का आम रिवाज है मैं नहीं देता । क्यों ? मेरी खोज ने यह सिद्ध कर दिया है कि गुरू नाम समझ विवेक और ज्ञान का हैं एक आदमी ने किसी आदमी को गुरु मान लिया लेकिन उससे समझ विवेक और ज्ञान प्राप्त नहीं किया तो उसे गुरु धारण करने का क्या लाभ हुआ । इस विचार से मैंने सर्वसाधारण को नाम नहीं दिया । मगर मैं यह नहीं कहता कि सर्वसाधारण को नाम देना गलत है । जो जीव अभी तक उनको किसी मार्ग पर लगाने के लिए और पंथ में शामिल करने के लिए नामदान भी बहुत आवश्यक है ताकि जीव सतसंग में आते रहें और ऐसा करने से उन्हें कभी न कभी ज्ञान हो जायेगा । इस प्रकार वे किसी समय पर अपने जीवन के सुधार की ओर ध्यान दे सकते हैं । मैं इस नाम के रिवाज को गलत नहीं कहता मगर मैं नामदान नहीं देता । मेरे नामदान न देने के कारण हैं । संसार अज्ञान से सेवा करता है । किसी के अन्तर मेरा रूप प्रकट हो गया । उसने यह समझकर कि गुरू महाराज मेरे अन्तर प्रकट हुये हैं मेरी सेवा करता है । मुझे धन देता है । अगर मैं वह धन ले लेता हूं तो वह मेरी जान खा जायेगा ।

आज प्रातः एक मिलट्री का केपटन बैठा हुआ था । उसने कहा बाबा जी! आज प्रातः आप मेरे अन्तर प्रकट हुये, बड़ी खुशी हुई । वह समझता है कि होशियारपुर में बैठा हुआ उसके अन्तर प्रकट हुआ । लेकिन मैं उसके अन्तर नहीं गया । मैं अपने आप को बचाने के लिए कि मैं इस धोखे करने और चार सौ बीस में न फँसू, मैंने जीवों को अपना चेला नहीं बनाया । यह मेरा भाव है ।

आज सतसंग दूसरे मुकाम का था । त्रिकुटी के स्थान पर साधन करने से क्या मिलता है ? शान्ति मिलती है । तुमने रामायण पढ़ी होगी । वर

Histrical है। उसका अध्यात्मिक अनुवाद क्या है? उसका भाव यह है कि रावण गन्दे विचार हैं जिसके कारण हमारी शान्ति चली जाती है अर्थात रावण सीता को हरके ले जाता है। हमारे गलत विचार हमारी शांति को खो देते हैं राम उस शान्ति को प्राप्त करने के लिए अजुध्या छोड़ देता है। राम का बाप दशरथ है दस इन्द्रियों वाला पांच कर्म इन्द्रियाँ और पाँच ज्ञान इन्द्रियाँ, यह शरीर है उसे छोड़ देता है। छोड़कर त्रिकुटी महल में इस दूसरे स्थान में पहुंचकर मन के जो सतोगुणी अंश हैं उनको साथ लेकर लंका पर चढ़ाई करके जो बुरे गन्दे विचार हैं जिनसे वह अशान्ति हुआ था उनको मार देता है और शान्ति अर्थात सीता को वापिस लाकर फ़िर अयोध्या में राज करता है एक कहावत है—

राम राम सब कोई कहे, दशरथ कहे न कोय।
एक बार दशरथ कहे, सहस गुणा फल होय॥

दशरथ हमारा शरीर है। हमारे गलत विचार, धोखा फरेब, किसी से घृणादेव के कारण हमारी शान्ति समाप्त हो जाती है। इस साधन के करने से आदमी के मन को शान्ति मिल जाती है फिर वह मन पर सवारी करके इस संसार में शरीर में रहता हुआ अपना जीवन सुख और शान्ति से व्यतीत करता है। दातादयाल का शब्द है—

दशहरा दस को हरा जब, फिर दिवाली आ गई।
मिट गया घट का अन्धेरा और उजाली आ गई।
दस हमारी इन्द्रियां हैं, पाई है उन पर विजय।
जीतकर अन्तर में सूरत, भोली भाली आ गई॥
तीसरे तिल के सहसदल, के कमल के विगसते।
देखले सुख की अवस्था, मन के गाती आ गई॥
खिल गये अन्तर कमल, और फूट निकली उनकी वांस।
प्रेम के रस की तरावट, डाली डाली आ गई॥
बाल गुरु का रूप है, तिरकूट के अस्थान पर।
देखने लाली चला, आँखों में लाली आ गई॥

टूटा गढ़ लंका का, रज रावण का भय जाता रहा।
अब तो रंगता राम के, चित में निहाली आ गई॥
जोत जगमग हो रही है, राज है प्रकाश का।
कौन कहता है अविद्या काली काली आ गई।
सन्तमत की इस दिवाली को, कोई जानेगा क्या॥
घट में सूरज चांद तारों की, उजाली आ गई।
राधास्वामी ने दिया हमको दिवाली का पता॥
घट में मान आप सुख को, देने वाली आ गई॥

यह त्रिकुटि के साधन का फल है। जब तक किसी काम करने के लिए रोचकपने का सहारा नहीं लिया जाता दूसरे में जोश पैदा नहीं होता। गद्य में जोश दिलाने के लिए बहुत से शब्द पड़े हुये हैं उदाहरणतय जैसाकि प्रातः मैंने कहा था कि भाखड़ा डेग से जो नहर आती है उसे रेडियो पर क्या कहते हैं।

भाखड़े तों औंदी इक शुटियार नचदी।

ये सब बातें रोचक हैं ताकि जीवों को उत्साह मिले मगर हम इस रोचकपने में ही फँसे रहते हैं असली बात को अपनाते नहीं। मैं यथार्थपने का हामी हूं इस वास्ते मैंने रोचकपने से काम नहीं लिया।

दूसरे अगर कोई संसार में उन्नति चाहता है। वह वैसा इष्ट बनाकर अपने अन्तर त्रिकुटि लगाये उसका उद्देश्य पूर्ण हो जायेगा, उसे ज्ञान हो जायेगा।

गढ़ भीतर जाय कीन्हा राज।
भक्ति भाव का पाया साज॥
कर्म बीज अब दिया जलाई।
आगे को फिर सुरत बढ़ाई॥

त्रिकुटि में कर्म बीज जल जाता है। कर्म वासना कहते हैं। वहां जाकर सब बुरी बासनायें समाप्त हो जाती है मन थिर हो जाता है।

नौबत झड़ती आठों याम ।
सूरत पाया मूल कलाम ॥
महाकाल और कुरम बखाना ।
उत्पत्ति बीजा यहां से जाना ॥

मन की एकाग्रता की अवस्था से ही मन फिर फुरता है । इस वास्ते इसे महाकाल या कुरम कहा है । जिस प्रकार कछवा अपने सारे अंगों को इकट्ठा करके इकट्ठा हो जाता है और जब वह चाहे अपने हाथ पाँव को बाहर निकालकर फिर चलने लग जाता है इसी प्रकार ही मन की दशा है । त्रिकुटि में मन इकट्ठा हो जाता है अर्थात कछवा बन जाता है । यह इसका भाव हैं ।

सूरज चाँद अनेकन देखे ।
तारा मंडल बहुविधि देखे ॥

यही बात दाता दयाल ने अपने उस शब्द में कही है कोई अन्तर नहीं । ये सूर्य चांद सितारे क्या हैं ? ये हमारे मन की ही बृत्तियों के दृश्य हैं । बाहर के सूर्य तुम्हारे अन्तर दिखाई नहीं देते । तुम्हारे मन के विचारों में शक्ति है इसलिए वही सूर्य और चांद की शक्लों में तुम्हारे जज्बे दिखाई देते हैं । यह रोचक वाणी है । जीवों को केवल उत्साह देने के लिए, क्योंकि अगर तुम शब्दों को इस प्रकार बनाकर नहीं कहोगे तो लोगों का इधर लगाव नहीं होगा मैं यथार्थ शिक्षा का हामी हूं । क्यों ? मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ कि तूने यथार्थपने को क्यों अपनाया ? केवल इसलिए कि रोचक और भयानक बातों के कहन से कुछ समय बाद लोगों का विश्वास टूट जाता है और उनकी सारी कमाई बरबाद हो जाती है । अगर यथार्थ बात कही जाये तो मानव को असलियत और हकीकत का पता लग जायेगा । मैंने कई आदमी राधास्वामी मत के दूसरे धर्म में शामिल होते देखे क्यों ? क्योंकि उनको रोचक शिक्षा से तसल्ली नहीं हुई जैसे मैंने उदाहरण दिया है—

भांखड़े तौं ओंदी इक मुटयार नचदी ।

यह एक जज्वा है। असल में वह पानी की एक लहर है। अब उसे एक अलंकार रूप में एक स्त्री बनाकर नाचती हुई बता दिया। ऐसे हीं सन्तों ने जब वह मस्ती में आती है अपनी वर्णन शैली से प्रकट किया है मगर उसका परिणाम बाद में अच्छा नहीं होता—

पिण्ड अण्ड से न्यारी खेली।
ब्रह्मण्ड पार चली अलबेली॥

असल चीज हमारे अन्तर सुख है जो शरीर और मन में आई हुई है और यहां आकर वह फँसी हुई है। त्रिकुटि का साधन करने से वह शरीर और मन से अलग होकर फिर अमर सफर करती है।

वन और पर्वत बाग दिखाई।
चमन चमन फुलवाड़ी छाई॥

इसका भी यही भाव है। अन्तर में कोई पेड़ नहीं है।

नहरें नदियाँ निर्मल धारा।
समुद्र पुल चढ़ हो गई पारा॥

स्वामी जी का नदियों नहरों से क्या भाव है वह जानते होंगे। मुझे पता नहीं। कहीं मन की वृत्तियें शीघ्र जोर से चलती हैं वे दरया हो गये कहीं धीरे २ चलती है वे नहरें हो गई। मन की ये सब वृत्तियें इकट्ठी होकर समुद्र के रूप में चली जाती हैं। इससे आगे फिर वे अमली मंजलों की ओर चलती हैं।

मैर सुमेर देख कैलासा।
गई सुरत यहँ विमल विलासा॥

मन की वृत्तियों को इकट्ठा करके फिर उसकी क्या दशा हो जाती है? विलास में चली जाती है। खुशी और चीज है और विलास और। खुशी का उदाहरण इस प्रकार है कि आप मेरे पास गुलाब का फूल लाये। वह बड़ा सुन्दर है। उसे देखकर खुशी हुई फिर उसकी खुशबू सूँघी। खुशबू सूंघने का नाम विलास है। इसके देखने और सूँघने से जो मुझे आनन्द मिला उसका नाम विलास है। जब सुरत अपने मन को इकट्ठा करके ऊपर जाने

का यत्न करती है उस समय उसे विलास, मस्ती और आनन्द मिलता है। यूँ भी जब तुम्हें कोई बात समझ आ जाती है तो तुम झूम जाते हो। जब कोई अच्छा राग सुनते हो तो तुम्हें खुशी मिलती है। एक खुशी तो राम के शब्दों के भाव समझने से मिलती है दूसरी वह जो उस राम की धुन को समझकर मिलती है। उस खुशी का नाम विलास है।

राधास्वामी कहत पुकारी।
दूसर मंजल करली पारी॥

यहाँ दूसरी मंजल समाप्त हो जाती है। इससे आगे कल को बताऊँगा। जब मन इकट्ठा हो जाता है उसके इकट्ठा होने के बाद जो कैफियत मस्ती की पैदा होती है उसमें जो कुछ होता है, वह है तीसरी मंजल। यह शरीर और मन का ही सम्बन्ध है। इससे आगे मन की समाधि का नाम सुन्न और महासुन्न है। यह योग है।

सबको राधास्वामी

—०—

निवेदन

वर्ष १९७८ का ६ वाँ अंक आपके हाथों में है पर अभी तक बहुत से भाईयों ने इसका चन्दा न भेजा है जिसकी बजह से पत्रिका को परेशानी का सामना करना पड़ रहा है। अतः जिन भाइयो ने अपना चन्दा नहीं भेजा है। वह शीघ्र अपना चन्दा भेजने की कृपा करें।

—व्यवस्थापक

साखी

चिउटी जहाँ न चढ़ि सके, राई नहिं ठहराव।
आवागमन की गम नहीं, तहँ सकलो[1] जग जाय ॥

उल्था

(१) पण्डित पढ़ पढ़ चतुराई करता है। अपनी मुक्ति का हाल तो मुझको बताओ (२) पुरुष कहां बसता है ? और वह कौन गाँव है ? पण्डित ! उसका नाम तो सुनाओ। (३) ब्रह्मा ने चार वेद बनाये परन्तु उनको भी मुक्ति का मर्म नहीं मिला। (४) दान पुण्य की बात तो बहुत सुनाई परन्तु यह पता नहीं कि आप स्वयं काल के गाल में हैं। (५) एक नाम अगम और गम्भीर है। उसी में ऐ कबीर ! दास स्थिर है। (साखी) जहाँ न चिउटी जा सकती है, न उसमें राई ठहर सकती है न आने जाने की सम्भावना है परन्तु सारा संसार उसी में चला जारहा है।

व्याख्या

दूसरों को पण्डित लोग मुक्ति का साधन बताते हैं और आप बँधे हुए हैं। इनसे कोई पूछे कि 'वह पुरुष कहाँ रहता है ? कौन गाँव है और क्या उसका नाम है" ब्रह्मा चार वेदों का वक्ता इस भेद को नहीं जानता। दान पुण्य की विधि तो भली भाँति बताई परन्तु आप काल के मुख के ग्रास बने हुए हैं। केवल एक नाम लेने वाले भक्त नाम में स्थिर हैं। और यों ही सब झक मार रहे हैं। काल पुरुष ब्रह्म के मुँह में सारा संसार चला जा रहा है। वास्तव में उसमें चिउटी नहीं जाती, न राई ठहर सकती है, व आवागमन

नोट—१=कुल, सब

है जो मन वाणी के परे भी कहा जाता है।

पैंतीसवीं रमैनी (३५)

[पण्डितों की भूल]

१. पंडित भूले पढ़ि गुणि वेदा ॥
आपु अपन[1] पौ जानु न भेदा ॥ १ ॥

२. संन्ध्या तर्पण औ षट[२] कर्मा।
ई[3] बहुरूप करहि अस धर्मा ॥ २ ॥

३. गायत्री गयु, चारि पढ़ाई ।
पूछहुं जाय मुक्ति किन पाई ॥ ३ ॥

४. और के छुये लेत हो सींचा।
तुम ते कहहु कौन है नीचा ॥ ४ ॥

५. ई गुण गर्व[4] करो अधिकाई ।
अति के गर्व न होइ भलाई ॥ ५ ॥

६. जासु नाम है गर्वप्रहारी[5] ।
मो कस[6] गर्व हि सकैं सहारी[7] ॥ ६ ॥

नोट—१=अपना आपा या निज स्वरूप। २=छः। ३=यह।
४=अहंकार। ५=अहंकार तोड़ने वाला। ६=कैसे। ७=सहन

॥ मनुष्य बनो ॥

साखी

कुल मर्यादा खोय के, खोजिनि[1] पद निर्वान।
अंकुर वीज नसाय के, भये विदेही थान॥

उल्था

(१) पण्डित वेदों को पढ़ गुन कर भूले। अपने अपन पौ का कुछ भेद नहीं मिला। (२) सन्ध्या तर्पण षट कर्म और ऐसे ऐसे वहुत से कर्मों को धर्म वताया है। (३) चार युग से वरावर गायत्री पढ़ाते चले आरहे हैं परन्तु उनसे पूछो कि उसके पढ़ने से किन किन को मुक्ति मिली है ? यदि और कोई छू ले तो आप अपने को पानी से सींच कर पवित्र करते हैं। (मानों और लोग अशुद्ध और अपवित्र हैं)। भला इनसे पूछो तो सही कि "क्या तुम से भी कोई नीचा और तुच्छ है ?" (५) अपने गुण पर अभिमान बहुत करते हो। वहुत घमण्ड करने में भलाई न होगी। (६) जिसका नाम गर्व प्रहारी अर्थात गर्व का मर्दन करने वाला है वह तुम्हारे गर्व को सह न सकेगा। (साखी) कुल और मर्यादा को खोकर तब ही निर्वाण पद की खोज की जाती है, यहाँ तक कि जब बीज और अंकुर तक भस्म हो जायें तब विदेह बना जाता है। जिन्होंने किया है ऐसा ही किया है। जब तक जाति अभिमान और कुल का अहंकार है वह इसके अधिकारी नहीं हैं।

नोट—अर्थ स्पष्ट है। व्याख्या की आवश्यकता नहीं है।

—×—

नोट—१=खोना, ढूँढ़ा।

छत्तीसवीं रमैनी (३६)

[द्वैत अद्वैत वादी इत्यादि]

१. ज्ञानी चतुर विचक्षण[1] लोई ।
एक स्यान स्यान न होई ॥ १ ॥

२. दूसर स्यान को मर्म न जाना ।
उत्पति परलय रैनि[2] बिहाना[3] ॥ २ ॥

३. वाणिज[4] एक सभन मिलि ठाना ।
नेम धर्म संयम भगवाना ॥ ३ ॥

४. हरि अस[5] ठाकुर ते[6] जिन जाई ।
बालन[7] भिस्त[8] गाँव दुहलाई[9] ॥ ४ ॥

साखी

वे नर मरि के कहाँ गये, जिन दीन्हा गुरु छोट ।
राम नाम निज जानि कै, छोड़हु वस्तू खोट[10] ॥

उल्था

(१) चतुर ज्ञानी और सूक्ष्म दृष्टा जो एक ही तत्व को मानते हैं स्याने (बुद्धिमान) नहीं है । (२) दूसरे बुद्धिमान जो दो तत्व मानते हैं उनको मर्म नहीं मिला । वह उत्पत्ति, प्रलय और रात दिन द्वन्द वाले जगत् में (दुखी) रहते हैं । (३) सब ने मिल कर एक

नोट—१=अनुभव, सूक्ष्म दृष्टा । २=रात । ३=दिन ४=व्यवपार ५=ऐसा । ६=वह । ७=बच्चों के । ८=विहिश्त, स्वर्ग । ९=दलह बने । १०=खोटा ।

व्यवपार कर लिया है और नियम, धर्म, संयम, भगवान (व्यवपार की सामग्री) है। (४) जिन्होंने हरि अर्थात विष्णु के ऐसा ठाकुर का इष्ट किया उन्होंने बच्चों के गाँव रूपी स्वर्ग के दूलह होने का साँग रचा है। (साखी) जिन्होंने गुरू को छोटा समझा वह मर कर किधर गये ! तुम राम नाम को विशेष रीति से जानकर खोटी वस्तुओं को छोड़ो।

व्याख्या

चतुर ज्ञानी और सूक्ष्म बुद्धि वाले मनुष्य अद्वैतवादी होते हुए भी स्याने (चतुर) नहीं हैं क्योंकि जो एक तत्व कहकर निश्चय बांधते हैं वह भूले हुए हैं। कारण यह है कि जब दो होंगे तभी एक का ध्यान होगा। एक कहने वाला वास्तव में दो का भ्रम दिलाता है। जो हैं वह है। एक कैसे कहा जाये ! अद्वैतवादी ने यह भूल की। जो द्वैत वादी हैं वह तो यों ही अनजान हैं और द्वन्द जगत् के दिन रात जीवन, मरन, सुख दुख आदि में फँसे रहते हैं। इन दोनों ने धर्म को व्यौपार बना रखा है और नियम, धर्म, संयम भगवान को बेचते रहते हैं। दुकानदारी के अतिरिक्त उनमें और क्या है ! और जो त्रिकुटी के मानने वाले ईश्वर जीव प्रकृति की हाँक लगाते रहते हैं वह विष्णु के भक्त होकर क्षण भङ्गी स्वर्ग में जाते हैं जो बच्चों का खेल है।

सुनो ! जो गुरू को छोटा जानते हैं वह सब मृत्यु की खोज हैं। इसलिये तुम गुरुद्वारा राम नाम को लेकर इन तुच्छ वस्तुओं से अलग थलग रहो।

सैंतीसवीं रमैनी (३७)

[सयाने (चतुर)]

१. एक सयान सयान न होई ।
दूसर सयान न जाने कोई ॥ १ ॥

२. तीसर सयान सयानै खाई ।
चौथ सयान तहां ले जाई ॥ २ ॥

३. पचये सयान न जानै कोई ।
छठयें महँ सब गये बिगोई[1] ॥ ३ ॥

४. सतयें सयान जो जानहु भाई ।
लोक वेद में देहु दिखाई ॥ ४ ॥

साखी

बीजक बतावे वित्त[2] को, जो बित्त गुप्ता[3] होय ।
शब्द बतावे जीव को, बूझे बिरला कोय ॥

———

नोट—उल्था सहज और साधारण है। उसकी आवश्यकता नहीं।

व्याख्या

जो एक ब्रह्म को जानते हैं। वह दो के विचार से दूर नहीं रहते क्योंकि जब तक दो न हों तब तक एक का विचार भी उत्पन्न नहीं होता। एक का विचार उसी समय में होगा जब

नोट—१=भूलाय। २=वस्तु। ३=छुपा हुआ।

दो होंगे। दूसरे लोग जो माया को मानते हैं और इसी को सब कुछ समझते हैं वह भ्रम में पड़े हैं। तीसरे जो जीव ही को मुख्य जानते हैं उनकी बुद्धिमानी उन्हीं को खा डालती है। चौथे जो ईश्वर वादी हैं वह ईश्वर के लोक में कुछ काल के लिये जाते हैं। पाँचवें जो पाँच इन्द्रियों के भोग में पड़े हैं वह यों ही बुद्धि विहीन हैं। छटबे जो मन को सब कुछ जानते वह मन ही के लपेट में पड़े रहते हैं और भूल में हैं। अब रह गये सातवें तत्व वेत्ता, यदि यह लोक वेद में दिखाई दें तो हमें दिखा दो तत्व वेत्ता कहीं भी दिखलाई नही देते।

कबीर साहिब का बीजक वास्तव में छुपे हुए धन का पता देता है। शब्द से केवल जीव का अनुमान होता है क्योंकि शब्द जीब पने का चिन्ह है। इन बातों की समझ किसी विरले को आती है। जीवों के साथ सैन बैन में बात की जा रही है। जो समझते हैं समझते हैं जो नहीं समझते वह नहीं समझते।

———

अड़तीसवीं रमैनी (३८)

[रुकावट]

१. यहि[1] विधि कहों कहा नहिं माना।
मारग[2] मांहि[3] पसारिनि[4] ताना॥ १॥

२. राति दिवस[5] मिलि जोरिन[6] तागा।
ओटत[7] कातत[8] भर्म न भागा॥ २॥

नोट—१=इस प्रकार। २=राह। ३=में। ४=फैलाया। ५=दिन। ६=जोड़ते हैं। ७=औटते। ८=कातते हुए।

३. भर्मे[1] सब घट रह्यो समाई ।
भर्म छोड़ि कतहूँ[2] नहिं जाई ॥ ३ ।

४. परै न पूरि दिनौ दिन छीना ।
जहाँ जाय तहाँ अंग[3] बिहीना ॥ ४ ॥

५. जो मति आदि अन्त चल आया ।
सो मति उन सब प्रगट सुनाया ॥ ५ ॥

साखी

वह संदेश फुर[4] मानि कै, लीन्हा शीश चढ़ाय ।
सन्तो ! है सन्तोष सुख, रहहु[5] तो हृदय जुड़ाय[6] ॥

उल्था

(१) इस प्रकार मैं समझता हूँ परन्तु कोई कहना नहीं मानता । राह ही में ताना बाना फैला दिया है । (२) रात दिन (बाद-विवाद और शास्त्रार्थ का) तागा मिलकर जोड़ते रहते हैं । उसको बराबर ओटते और कातते रहते हैं परन्तु भ्रम दूर नहीं होता । (३) सब के हृदय में भ्रम समाया हुआ है । भ्रम को छोड़ कर कहीं जाया नहीं जाता । (४) पूरी नहीं पड़ती दिनों दिन छीन होते जाते हैं । जहाँ जाओ वहाँ अङ्ग हीनता दिखाई देती है (दोष दिखाई देता है ।) (५) जो मत आदि अन्त से चला आया है वही मत सन्तों ने प्रगट करके सुनाया है । (साखी) इस सन्देश को सच्चा समझ कर

नोट--भ्रम ही । २=कहीं भी । ३=अंगहीन । ४=सच । ५—रहो । ६=ठण्डा हो ।

शिर पर चढ़ाओ ; ऐ सन्तो ! यदि सन्तोष सुख को प्राप्त करलो तो तुम्हारा हृदय आप ही आप ठन्डा होजायेगा ।

व्याख्या

कबीर साहिब कहते हैं—'मैं उनको इस प्रकार समझाता हूँ परन्तु मेरा कहना कोई नहीं मानता । यों ही राह में टाँग अड़ाया करते हैं । रात दिन बाद विवाद ही से काम रहता है । प्रमाण और युक्तियों की भरमार है । उसी काते हुए सूत को बराबर कातते और ओढ़ते रहते हैं परन्तु भ्रम नहीं जाता भ्रम का चोर सबके हृदय में हैं परन्तु इस भ्रम का त्याग भी नहीं किया । दिनों दिन निर्बलता आरही है । पूरी किसी को भी नहीं पड़ती । जहाँ देखो वहाँ ही कमी और दोष है । जो मत कि आदि अन्त से चला आया है उसी को सन्तों ने प्रगट करके सुनाया है । इसको सच्चा समझ कर शिर पर चढ़ाओ । सन्तोष को धारण करो, शान्ति मिलेगी और भ्रान्ति जाती रहेगी ।"

उन्तालीसवीं रमैनी (३९)

[मुसलमान विचार]

१. जिन्ह[1] कलमा कलि[2] माँहि पढ़ाया ।
कुदरत[3] खोज तिनहु[4] नहिं पाया ॥ १ ॥

नोट—१=जिन्होंने । २=कलियुग । ३=कुदरत, प्रकृति । ४=उन्होंने भी ।

२. करिमत[1] कर्म करैं करतूती ।
वेद किताब भया सब रीती ॥ २ ॥

३. करमत सो जो गर्भ औतरिया ।
करमत सो जो नाम हि धरिया ॥ ३ ॥

४, करमत सुन्नति[2] और जनेऊ ।
हिन्दू तुरुक न जानै भेऊ[3] ॥ ४ ॥

साखी

पानी पवन सँजोय[4] के, रचिया ई उत्पात[5] ।
शून्य हि सुरति समानिया, कासों कहिये जात ॥

उल्था

(१) जिन्होंने कलियुग में कलमा पढ़ाया उनको भी प्रकृति का खोज नहीं मिला । (२) करामात कर्म और करतूत करते हैं । हर प्रकार से उनका ग्रन्थ (कुरान) ही उनके लिये होगया (३) किस करामात को ढूँढते हो ? (बच्चे का गर्भ में आना ही करामात है । नाम का धरना ही करामात हैं । (४) करामात सुन्नत और जनेऊ ही में सब रह गये । हिन्दू और तुरुक दोनों ही इस भेद को नहीं जानते । (साखी) जल और वायु के मिलाप से यह उत्पात रचा गया । सुरत शून्य (सुन्न स्थान में समाई । किसी को किस प्रकार कहा जाये ।

नोट--१=करामात । २=मुसलमानी । ३=भेद । ४=मिलाकर । ४=बखेड़ा ।

व्याख्या

जिन्होंने कलियुग में कलमा पढ़ाया उनको भी प्रकृति के खोजने से कुछ नहीं मिला। वह भी करामात कर्म और करतूत में भूले और कुरान को अपना वेद वनाया। इनके यहाँ करामात की मुख्यता है। करामात (योग की आश्चर्य जनक क्रिया अर्थात् सिद्धि शक्ति की महिमा वर्णन की जाती है। यह नहीं समझते कि गर्भ में आना और नाम पाना स्वयं वड़ी करामात है। परिणाम यह हुआ कि मुसलमान तो करामात और सुन्नत में और हिन्दू जनेऊ के फन्दे में पड़े। दोनों में से किसी को भी सत् (सार वस्तु) हाथ नहीं आया। पहिले सुन्न (शून्य) था। उसी में सुरत समाई हुई थी। जल और वायु के मेल से यह वखेड़ा रूपी शरीर उत्पन्न हुआ परन्तु वात किससे और क्योंकर कही जावे!

चालीसवीं रमैनी (४०)

[आदि का विचार]

१. आदम आदि सुद्धि नहिं पाई।
मामा[2] हुउआ कहाँ ते आई ॥ १ ॥

२. तब नहिं होते तुरुक औ हिन्दू।
माया के रुधिर पिता के विन्दू ॥ २ ॥

३. तब नहिं होते गाय कसाई।
कहु विस्मिल्लाः किन[3] फरमाई ॥ ३ ॥

नोट—१=सुध, खबर। २=माया। ३=किसने कहा।

४. तब नहिं रह्यो कुल और जाती ।
दोजख भिश्त[1] कहाँ उतपाती ॥ ४ ॥

५. मन मसले की खबर न जानै ।
मति[2] भुलान दोई दीन बखानें ॥ ५ ॥

साखी

संयोग का गुण रहै, बिन योगे गुण जाय ।
जिभ्या स्वाद के कारणे, कीने बहुत उपाय ॥

उत्था

(१) आदम को जो सबसे पहले उत्पन्न हुआ इस बात का पता नहीं है कि हउआ उसकी स्त्री कहाँ से उत्पन्न हुई । (२) उस समय तुरुक और हिन्दू कहाँ होते थे ? न माता का रुधिर (रज) था न पिता का वीर्य था (३) तब गाय और कसाई भी नहीं थे । कहीं ! तब बिस्मिल्लाह अर्ररहमान अर्ररहीम किसने कहा था ? तब कुल और जाति नहीं थीं । नर्क (दोजख) स्वर्ग (विहिश्त) तब कहाँ थे ? (५) मन के मसले का पता किसी को नहीं है । बुद्धि निर्बुद्ध हुई । तब दो दीन हिन्दू और मुसलमान के बनाये गये । (साखी) संयोग से गुण रहता है और बिना योग के चला जाता है । केवल जिह्वा के लिये बहुत उपाय किये गये ।

व्याख्या

की आवश्यकता नहीं है । अर्थ बहुत ही स्पष्ट है । साखी का अर्थ यह है कि जब संयोग अर्थात वस्तुओं का मिलाप होता है

१=बिहिश्त । २=दुद्धि ।

तभी उनमें विशेष प्रकार का छोभ उत्पन्न करने वाला विचार हृदय में प्रगट होता है और जब सब अलग अलग हो जाता है तब यह गुण जाता रहता है। इन्द्री और इन्द्रियों के विषय इकठ्ठे हुए तब मन को इन्द्री भोग का विचार हुआ और जिह्वा के स्वाद के लिये अनेक प्रकार के भोजन का प्रबन्ध करना पड़ा।

इकतालीसवीं रमैनी (४१)

[अज्ञान]

१. अम्बु[1] की राशि[2] समुद्र की खाई।
रवि[3] शशि[4] कोटि[5] तैंतिसो भाई ॥ १ ॥

२. भँवर जाल में आसन मांड़ा[6]।
चाहत[7] सुख दुख संग न छांड़ा[8]॥ २ ॥

३. दुख को मर्म काहु[9] नहिं पाया।
बहुत भाँति कै जग बौराया[10]॥ ३ ॥

४. आपु हि बाउर[11] आपु सयाना।
हृदया बसत[12] रमम नहिं जाना ॥ ४ ॥

नोट—१=बुन्द। २=देर। ३=सूर्य। ४=चाँद। ५=३३ कड़ोर। ६=लगाया। ७=चाहते हैं। ८=छोड़ा। ९=किसी ने भी १०=पागल हो गया। ११=पागल। १२=रहता हुआ।

साखी

तेई[1] हरि[2] तेइ ठाकुरा, तेई हरि के दास ।
ना यम[3] भया न यामिनी,[4] भामिनि[5] चली निरास ॥

उल्था

(१) विन्दु की ढेर और समुद्र की खाई में तैंतीस कड़ोर सूर्य चाँद आदि देवता उत्पन्न हुए । (२) सब ने भँवर जाल में आसन मार रक्खा है । सुख चाहते हैं परन्तु दुख का संग छोड़ा नहीं जाता । कोई भी दुख का भेद नहीं जानता और कई प्रकार से यह संसार बावला हो गया है । (४) आप ही बाबले और आप ही सयाने हैं । जो राम हृदय में बसता है उसको नहीं जानते । (साखी) वही जीव अपने आप को मालिक और अपने ही आपको दास समझता रहा है । जिन्होंने यम (यमराज) और यामिनी (रात) को नहीं माना उनकी ओर से भामिनि रूप माया उदास होकर चली गई ।

व्याख्या

प्रकृति के समुद्र में अनगिनत बुन्द हैं । इन बूदों की अलग अलग जत्था नाना प्रकार के रूप की व्यक्तियों में प्रगट हुई, अर्थात बुन्द गुथे—उनसे कहीं सूर्य उत्पन्न हुआ और कहीं चाँद कड़ोरों देवता उत्पन्न होगये । यह वास्तव में रचना के अनगिनत केन्द्र विन्दु हैं जो परमाणुओं के इकट्ठा हो जाने से अनेक रूपों में प्रगट होगये । एक विन्दु तुम हो एक मैं हूं । एक देवता है । एक दानव है इत्यादि इन सब में अहं भाव अर्थात अहंकार उत्पन्न होने ही से कर्म भ्रम

नोट—१=वही । २=विष्णु । ३=धर्मराज । ४=रात ।

और कर्म भ्रम से आवागमन का भँवर बना। सब के सब उसी भँवर में गोते खा रहे हैं। सुख चाहते हैं परन्तु अहंकार जो दुख रूप है छोड़ा नहीं जाता। यह दुख का भेद कोई नहीं जानता। नाना प्रकार से लोगों को पागल और बावला बनाया गया है। यह अहंकार बढ़ते बढ़ते यहाँ तक बढ़ा कि लोग 'अहं ब्रह्म' की हाँक लगाने लगे। कोई 'अहं ब्रह्म' कहता है कोई 'अहं जीव' कहता है परन्तु मन में बसे हुए राम को नहीं जानते। मन अहंकार को दे रखा है। इसलिये भ्रम में पड़ कर आप ही ठाकुर और आप ही दास बने हुए हैं और अहंकार ही की प्रतीत में जान दे रहे हैं। इनमें से जो बुद्धिमान थे और समझ बूझ रखते थे और स्वतः वेत्ता थे वह अहंकारी नहीं हुए। जिन्होंने 'अहं ब्रह्म' कहा न 'अहं जीव' कहा उनके लिये न यमराज उत्पन्न हुए न यमराज की शक्ति रात्रि रूप यामिनी उत्पन्न हुई। इनसे भामिनी माया निराश होकर चली गई क्योंकि जिस रस्सी से माया बाँधती है वह अहंकार है। यहाँ अहंकार का पता ही नहीं। फिर इनको माया बाँधे भी तो किससे बाँधे।

बयालीसवीं रमैनी [४२)

[आदि]

१. जब हम रहल[१] रहा नहिं कोई।
हमरे माँहि रहल सब कोई ॥ १ ॥

नोट—१=रहे।

२. कहहु हो राम कौन तोरि सेवा।
सो समुझाय कहौं मोहि देवा ॥ २ ॥

३. फुर[1] फुर कहूं मारु[2] सब कोई।
झूठेहि झठा संगति होई ॥ ३ ॥

४. आँधर कहे सवै हम देखा।
तहँ दिठियार[3] पैठि सुख पेखा[4] ॥ ४ ॥

५. यहि बिधि कहूं मानु जो कोई।
जस मुख तस जो हृदया होई ॥ ५ ॥

६. कहहिं कबीर हंस मुसकाई[5]।
हमरे कहल[6] छूटियो[7] भाई ॥ ६ ॥

उल्था

(१) जब हम थे तब कोई नहीं था। सब हमारे ही अन्दर बसते थे। (२) राम कहो उस समय तुम्हारी क्या सेवा थी। मुझको ऐ देव! समझा कर बताओ। यदि सच सच कहता हूँ तो सब मारते है। झूटे झूठों की संगति में पड़े हैं। (४) अन्धा कहता है, "हमने सब कुछ देखा। वहाँ देखनेवाले ने प्रवेश करके मुख (सत्) का पता पा लिया। (५) यदि कोई माने तो मैं उसको इसी प्रकार कहता हूं--जैसा मन वैसी वाणी! जैसा मन वैसा काम (६) कबीर साहिब कहते हैं-'हंस की मूश्कें कसी हुई हैं। यदि

नोट--१=सच्ची सच्ची। २=मारे। ३=देखने वाला।

वह छूटेगा तो हमारे ही उपदेश से छूटेगा।"

व्याख्या

सत् पुरुष की वाणी है—सत् सबसे पहिले और सबका उत्पादक है। जब हम (सत्) थे तब और कोई वस्तु नहीं थी। सब हम में ही थे। न राम की कोई सेवा करता था न सेवा पूजा का व्यवहार था। वह अन्धे अहंकारी जीव सत के जानने के अभिमानी हैं परन्तु सच्ची बात यह है कि वहाँ केवल आत्मिक दृष्टि रखने वाले अहंकार रहित यथार्थ अधिकारी पहुंचे हैं। सच्ची बात सुन कर लोग बुरा मानते हैं और झूठ की संगत से प्रेम करते हैं। हम तो सच्ची बात सुनाते हैं। जैसा मन में है वैसा ही मुख से भी निकलता है। वद्ध (बँधे हुये) जीव यदि हमारी सुनते हैं तो बन्धन से छूटेंगे नहीं तो उनकी मुश्कें वैसी ही कसी रहेंगी।

तैंतालीसवीं रमैनी [४३]

[मनमत पना]

१. जिन[१] जिन कीन आपु विश्वासा।
नर्क गये तेहि[२] नरक हि बासा ॥ १ ॥

२. आवत जात न लागहि बारा[३]।
काल अहेरी[४] सांझ सकारा ॥ २ ॥

नोट—१=जिस जिस ने। २=उसको। ३=देर। ४=शिकारी

३. चौदह विद्या पढ़ि समुझावे ।
अपने मरन की खबर न पावे ॥ ३ ॥

४. जाने[1] जिव को पड़ा अन्देशा ।
झूठ हि जान के कहै सन्देशा । ४ ॥

५. संगति छाँड़ि करै इसरारा[2] ।
उबहै[3] मोट[4] नरक की धारा ॥ ५ ॥

साखी

गुरू द्रोही औ मनमुखी, नारी पुरुष विचार (
ते नर चौरासी भ्रमहिं, जोलौं[5] शशि[7] दिनकार[8] ॥

उल्था

(१) जिन जिन लोगों ने मन मत होकर आप विश्वास किया वह नर्क में गये और नर्क ही में बासा किया । (२) नर्क में आते जाते देर नहीं लगती क्योंकि काल शिकारी प्रातः काल और संध्या समय बराबर शिकार मारता रहता है । (३) चौदह विद्या पढ़कर समझाते हैं (परन्तु) अपनी मृत्यु का पता ही नही हैं । (४) जाने वाले जीव को बड़ा अन्देशा (सोच) पड़ा है । झूट जान कर सन्देश देता है । (५) (अच्छी) संगत छोड़कर (अपने मन मत की) हट करता है और नर्क की मोटी धार को उलचता रहता है । (साखी) स्त्री पुरुष जो गुरु द्रोही और मन मुखी हैं वह उस

नोट—१=जाने वाले । २=हट । ३=उलचते हैं । ४=मोटी ।

समय तक चौरासी में भ्रमण करते रहते हैं। जब तक चाँद और सूर्य का व्यवहार जगत में है।

व्याख्या

मन मत का विश्वास नर्क में ले जाता है क्योंकि वह अहंकार के साथ होता है। जो जैसा सोचता है वह वैसा ही हो जाता है। काल सर पर शिकार कर रहा है। नर्क में आते जाते देर नहीं लगती। विद्या पढ़कर अपने जीवन के परिणाम की तो सुध ही नहीं है, औरों को समझाते रहते हैं। जो जीव इस मन मुखी उपदेश को जान गये हैं उनको चिन्ता रहती है क्योंकि वह समझते हैं कि इस अहंकारी और मन मुखी जीव का सन्देश झूठा है। जो सच्चे साधू और गुरु की संगत छोड़कर मनमुखी बातों पर हट करता है वह नर्क की मोटी धार को उलचता रहता है। मनमुखी और गुरु के विरोधियों को उस समय तक चौरासी है जब तक चाँद और सूर्य आकाश मण्डल में हैं।

धन्यवाद

१० रु० श्री जमुना प्रसाद गुप्ता जी, सुरेन्द्र नगर, अलीगढ़ ने अपने पुत्र की नौकरी लगने की खुशी में, २०) रु० श्री जमुनादास मलहोत्रा, अशोक नगर, बनारस ने अपनी पुत्री के विवाहोत्सव पर, १०) रु० श्री गोपीराम जी हिसार एवं १०) रु० ठा० केसरसिंह जी, देवली, इटावा ने 'मनुष्य बनो' की सहायतार्थ भेजें हैं। मालिक सबका कल्याण करे एवं सुख समृद्धी

परमदयाल फकीरचन्द जी कृत हिन्दी पुस्तकें

दयाल फकीर की जीवनी ३)५०
मानव धर्म प्रकाश भाग १)७५
मानव धर्म प्रकाश भाग २ (श्री दुर्गादास कृत) १)
आवागवन उर्फ जीवन रहस्य १)५०
सार का सार भाग १ व २ ५)
गरुड़ पुराण रहस्य १)७५
सन्त सत्गुरु वक्त १)५०
अगम वाणी भाग १, २, ३ ३)
सतपः)५०
बारहमासा की व्याख्या २)५०
सुरत शब्द योग १)
निर्वाण से परे १)
बेहद्दी या अपार के परे १)२५
ईश्वर दर्शन १)२५
मेरी धार्मिक खोज १)२५
गुरु महिमा १)
गुरु बन्दना)७५
अजायव पुरुष १)
सार तत्व सचाई और शान्ति १)
आदि अन्त १)२५
पांच नाम की व्याख्या १)५०
सत ज्ञान दाता भाग १ व २ २)
नाम दान १)
उस घर की खोज १)
अगम विकास १)
निर्बाण १)
अनुभव ज्ञान प्रकाश १)
ज्ञान योग १)

अन्य धार्मिक पुस्तकें

सत सनातन धर्म या सत मानव धर्म ३)
जगत कल्याण)७५
विश्व धर्म भाग १ व २ व ३ १)७५
फकीर बचनामृत)५०
कर्म भोग या मौज भाग १ व २ १)७५
राधास्वामी शताब्दी पर मेरी भेट भाग १ व २ २)५०
जगत निस्तार १)२५
जगत उभार १)
मानव कल्याण भाग १, २, ३, ४, ५ ६)
अदभुत मोती १)
५० वर्षीय फकीर अनुभव)७५
मेरा ८३ वर्षीय अनुभव १)२
मानवता युग धर्म ८)०५
आकाशी रचना)५०
आजादी की कुंजी)७५
शिव फकीर पत्रावली १)५०
हृदय उद्गार १)
कबीर सार शब्द व्याख्या १)
रचना का भेद)७५
नव विवाहितों को उपदेश)२५
उन्नति मार्ग)५०
गूढ़ रहस्य व्याख्या २)५०
फकीर प्रवचन)७५
सार भेद)२५

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

हमारे यहां

महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज

कृत

हिन्दी की आध्यात्मिक, धार्मिक,
स्त्री उपयोगी,
स्वास्थ्य व मनोविज्ञान सम्बन्धी
पुस्तकें तथा 'शाही' और 'मोती'
सिलसिले के उपन्यास तथा
परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज
कृत उच्च कोटि की अमूल्य पुस्तकें
मिलती हैं।
पूरा सूचीपत्र मंगायें।
डाक खर्च सब का अलग है।
पुस्तकें रजिस्टर्ड डाक या रेल से
भेजी जाती हैं।

मिलने का पता :—

कार्यालय

मनुष्य बनो

शिव भवन, लेखराजनगर,
अलीगढ़ (उ० प्र०)

सम्पादक — प्रभुदयाल मीतल
व्यवस्थापक व प्रकाशक—
श्रीमती सुधा मीतल,
शिव भवन, लेखराज नगर
अलीगढ़।

ग्राहक सं० ——————

श्री ——————

Printed by S. Mittal, Data Dayal Printers, Aligarh